ईश्वर सिद्धान्त के रूप में सर्वेश्वरवाद (Pantheism) की समीक्षात्मक व्याख्या

धार्मिक भावना को संतुष्ट नहीं कर पाता है।

(iv) सर्वेश्वरवाद उपासक और उपास्य के बीच का अंतर समाप्त कर देता है। ईश्वर और विश्व दोनों ही एक दूसरे से अविच्छेद्य है। जबकि धार्मिक संबंध को कायम रखने के लिए उपासक और उपास्य के बीच दूरी का रहना अनिवार्य है। इसप्रकार ईश्वर और भक्त की दूरी मिटाकर सर्वेश्वरवाद धार्मिक संबन्ध को नष्ट कर देता है।

(v) यह इच्छा स्वतन्त्रता का खण्डन करता है। इसके अभाव में नैतिक आचरण असंभव हो जाता है। नैतिक आचरण के अभाव में धार्मिक आचरण अर्थहीन हो जाता है। इस स्थिति में धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, उचित-अनुचित, निन्दा-अभिनन्दन, कर्तव्य-अकर्तव्य आदि में अन्तर लाना असंभव हो जाता है। इस प्रकार सर्वेश्वरवाद धार्मिक विकास के मार्ग में बाधक महसूस होता है।

(vi) विश्व की एकता के लिए यह अनेकता को समाप्त कर देना चाहता है। इसके अनुसार ईश्वर ही एक मात्र सत्ता है और विश्व के सभी पदार्थ उसी के विकार है। जब व्यक्ति विशेष का स्वतन्त्र अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है तब फिर धार्मिक आचरण कौन करेगा? इस प्रकार अनेकत्वविहीन एकता का प्रचारक सर्वेश्वरवाद निरर्थक प्रतीत होता है।

(vii) इसके अनुसार ईश्वर ही विश्व है और विश्व ही ईश्वर है। दोनों को एक मानने पर ऐसा भी कहा जा सकता है कि विश्व ही सब कुछ है। ऐसा कहना जड़वाद तथा प्रकृतिवाद का समर्थन करना है। अतः जड़वाद और प्रकृतिवाद के वातावरण में धार्मिक भावना का पनपना असंभव है।

भाग-6

(VIII) विश्व में दुःख, अशुभ एवं अनेक प्रकार की बुराइयाँ एवं अपूर्णताएँ विद्यमान हैं। ईश्वर विश्व में व्याप्त रहने पर इन बुराइयों से ग्रस्त हो जाता है। धार्मिक भावना की संतुष्टि के लिए ईश्वर केवल सद्गुण से युक्त होना चाहिए न कि बुराइयों से ग्रस्त। अतः सर्वेश्वरवाद का ईश्वर जो खुद बुराइयों का शिकार है, अपने भक्तों को बुराइयों से कैसे मुक्त कर सकता है?

(IX) सर्वेश्वरवाद विश्व प्रक्रिया को यान्त्रिक मानता है। इसके पीछे कोई लक्ष्य नहीं काम करता। विश्व के प्राणी यंत्रवत कार्य करते रहते हैं। ये सब ईश्वर के इशारे पर होता है। यह नियतिवाद की अवस्था है जबकि धार्मिक आचरण के लिए नियतिवाद बाधक है।

इस प्रकार उपर्युक्त दोषों के आधार पर हम कह सकते हैं कि सर्वेश्वरवाद न तो मस्तिष्क को संतुष्ट कर पाता है और न हृदय को ही।